मस्तक पर चक्र-पंचतंत्र

एक नगर में चार ब्राह्मण पुत्र रहते थे । चारों में गहरी मैत्री थी । चारों ही निर्धन थे । निर्धनता को दूर करने के लिए चारों चिन्तित थे । उन्होंने अनुभव कर लिया था कि अपने बन्धु-बान्धवों में धनहीन जीवन व्यतीत करने की अपेक्षा शेर-हाथियों से भरे कंटीले जङगल में रहना अच्छा है । निर्धन व्यक्ति को सब अनादर की दृष्टि से देखते हैं, बन्धु-बान्धव भी उस से किनारा कर लेते हैं, अपने ही पुत्र-पौत्र भी उस से मुख मोड लेते हैं, पत्नी भी उससे विरक्त हो जाती है । मनुष्यलोक में धन्के बिना न यश संभव है, न सुख । धन हो तो कायर भी वीर हो जाता है, कुरुप भी सुरुप कहलाता है, और मूर्ख भी पंडित बन जाता है ।

यह सोचकर उन्होंने धन कमाने के लिये किसी दूसरे देश को जाने का निश्चय किया । अपने बन्धु-बान्धवों को छोडा, अपनी जन्म-भूमि से विदा ली और विदेश-यात्रा के लिये चल पडे ।

चलते-चलते क्षिप्रा नदी के तट पर पहुँचे । वहाँ नदी के शीतल जल में स्नान करने के बाद महाकाल को प्रणाम किया । थोडी दूर आगे जाने पर उन्हें एक जटाजूटधारी योगी दिखाई दिये । इन योगिराज का नाम भैरवानन्द था । योगिराज इन चारों नौजवान ब्राह्मणपुत्रों को अपने आश्रम में ले गए और उनसे प्रवास का प्रयोजन पूछा । चारों ने कहा- "हम अर्थ-सिद्धि के लिये यात्री बने हैं । धनोपार्जन ही हमारा लक्ष्य है । अब या तो धन कमा कर ही लौटेंगे या मृत्यु का स्वागत करेंगे । इस धनहीन जीवन से मृत्यु अच्छी है ।"

योगिराज ने उनके निश्चय की परीक्षा के लिये जब यह कहा कि धनवान बनना तो दैव के अधीन है, तब उन्होंने उत्तर दिया- - "यह सच है कि भाग्य ही पुरुष को धनी बनाता है, किन्तु साहसिक पुरुष भी अवसर का लाभ उठा कर अपने भाग्य को बदल लेते हैं । पुरुष का पौरुष कभी-कभी दैव से भी अधिक बलवान हो जाता है । इसलिए आप हमें भाग्य का नाम लेकर निरुत्साहित न करें । हमने अब धनोपार्जन का प्रण पूरा करके ही लौटने का निश्चय किया है । आप अनेक सिद्धियों को जानते हैं । आप चाहें तो हमें सहायता दे सकते हैं, हमारा पथ-प्रदर्शन कर सकते हैं । योगी होने के कारण आपके पास महती शक्तियाँ हैं । हमारा निश्चय भी महान् है। महान् ही महान् की सहायता कर सकता है ।"

भैरवानन्द को उनकी दृढता देखकर प्रसन्नता हुई । प्रसन्न होकर धन कमाने का एक रास्ता बतलाते हुए उन्होंने कहा - "तुम हाथों में दीपक लेकर हिमालय पर्वत की ओर जाओ । वहाँ जाते-जाते जब तुम्हारे हाथ का दीपक नीचे गिर पडे तो ठहर जाओ । जिस स्थान पर दीपक गिरे उसे खोदो । वहीं तुम्हें धन मिलेगा । धन लेकर वापिस चले आओ ।"

चारों युवक हाथों में दीपक लेकर चल पडे । कुछ दूर जाने के बाद उन में से एक के हाथ का दीपक भूमि पर गिर पडा । उस भूमि को खोदने पर उन्हें ताम्रमयी भूमि मिली । वह तांबे की खान थी । उसने कहा- -"यहाँ जितना चाहो, ताँबा ले लो ।" अन्य युवक बोले - "मूर्ख ! ताँबे से दरिद्रता दूर नहीं होगी । हम आगे बढेंगे । आगे इस से अधिक मूल्य की वस्तु मिलेगी ।"

उसने कहा- "तुम आगे जाओ, मैं तो यहीं रहूँगा ।" यह कहकर उसने यथेष्ट ताँबा लिया और घर लौट आया ।

शेष तीनों मित्र आगे बढे । कुछ दूर आगे जाने के बाद उन में से एक के हाथ का दीपक जमीन पर गिर पडा । उसने जमीन खोदी तो चाँदी की खान पाई । प्रसन्न होकर वह बोला- "यहाँ जितनी चाहो चाँदी ले लो, आगे मत जाओ ।" शेष दो मित्र बोले- "पीछे ताँबे की खान मिली थी, यहाँ चाँदी की खान मिली है; निश्चय ही आगे सोने की खान मिलेगी । इसलिये हम तो आगे ही बढेंगे ।" यह कहकर दोनों मित्र आगे बढ गये ।

उन दो में से एक के हाथ से फिर दीपक गिर गया । खोदने पर उसे सोने की खान मिल गई । उसने कहा- "यहाँ जितना चाहो सोना ले लो । हमारी दरिद्रता का अन्त हो जायगा । सोने से उत्तम कौन-सी चीज है । आओ, सोने की खान से यथेष्ट सोना खोद लें और घर ले चलें ।" उसके मित्र ने उत्तर दिया- "मूर्ख ! पहिले ताँबा मिला था, फिर चाँदी मिली, अब सोना मिला है; निश्चय ही आगे रत्नों की खान होगी । सोने की खान छोढ दे और आगे चल ।" किन्तु, वह न माना । उसने कहा- "मैं तो सोना लेकर ही घर चला जाऊँगा, तूने आगे जाना है तो जा ।"

अब वह चौथा युवक एकाकी आगे बढा । रास्ता बडा विकट था । काँटों से उसका पैर छलनी हो गया । बर्फीले रास्तों पर चलते-चलते शरीर जीर्ण-शीर्ण हो गया, किन्तु वह आगे ही आगे बढता गया ।

बहुत दूर जाने के बाद उसे एक मनुष्य मिला, जिसका सारा शरीर खून से लथपथ था, और जिसके मस्तक पर चक्र घूम रहा था । उसके पास जाकर चौथा युवक बोला- "तुम कौन हो ? तुम्हारे मस्तक पर चक्र क्यों घूम रहा है ? यहाँ कहीं जलाशय है तो बतलाओ, मुझे प्यास लगी है ।"

यह कहते ही उसके मस्तक का चक्र उतर कर ब्राह्मणयुवक के मस्तक पर लग गया । युवक के आश्चर्य की सीमा न रही । उसने कष्ट से कराहते हुए पूछा- "यह क्या हुआ ? यह चक्र तुम्हारे मस्तक से छूटकर मेरे मस्तक पर क्यों लग गया ?"

अजनबी मनुष्य ने उत्तर दिया- "मेरे मस्तक पर भी यह इसी तरह अचानक लग गया था । अब यह तुम्हारे मस्तक से तभी उतरेगा जब कोई व्यक्ति धन के लोभ में घूमता हुआ यहाँ तक पहुँचेगा और तुम से बात करेगा ।" युवक ने पूछा- "यह कब होगा ?"

अजनबी- -"अब कौन राजा राज्य कर रहा है ?"

युवक- "वीणा वत्सराज ।"

अजनबी- "मुझे काल का ज्ञान नहीं । मैं राजा राम के राज्य में दरिद्र हुआ था, और सिद्धि का दीपक लेकर यहाँ तक पहुँचा था । मैंने भी एक और मनुष्य से यही प्रश्न किये थे, जो तुम ने मुझ से किये हैं ।"

युवक - "किन्तु, इतने समय में तुम्हें भोजन व जल कैसे मिलता रहा ?"

अजनबी - "यह चक्र धन के अति लोभी पुरुषों के लिये बना है । इस चक्र के मस्तक पर लगने के बाद मनुष्य को भूख, प्यास, नींद, जरा, मरण आदि नहीं सताते । केवल चक्र घूमने का कष्ट ही सताता रहता है । वह व्यक्ति अनन्त काल तक कष्ट भोगता है ।"

यह कहकर वह चला गया । और वह अति लोभी ब्राह्मण युवक कष्ट भोगने के लिए वहीं रह गया ।

सीख : लालच बुरी बला है ।

अनुवाद - कुलदीप धर

मस्तक पर चक्र-पंचतंत्र

एक नगर में चार ब्राह्मण पुत्र रहते थे। चारों में गहरी मैत्री थी। चारों ही निर्धन थे। निर्धनता को दूर करने के लिए चारों चिन्तित थे। उन्होंने अनुभव कर लिया था कि अपने बन्धु-बान्धवों में धनहीन जीवन व्यतीत करने की अपेक्षा सिंह-व्याघ्रों से भरे कंटीले जंगल में रहना अच्छा है। निर्धन व्यक्ति को सब अनादर की दृष्टि से देखते हैं, बन्धु-बान्धव भी उस से किनारा कर लेते हैं, अपने ही पुत्र-पौत्र भी उस से मुख मोड़ लेते हैं, पत्नी भी उससे विरक्त हो जाती है। मनुष्यलोक में धन के बिना न यश संभव है, न सुख। धन हो तो कायर भी वीर हो जाता है, कुरूप भी सुरूप कहलाता है, और मूर्ख भी पंडित बन जाता है।

यह सोचकर उन्होंने धन कमाने के लिये किसी दूसरे देश को जाने का निश्चय किया। अपने बन्धु-बान्धवों को छोड़, अपनी जन्मभूमि से विदा ली और विदेश-यात्रा के लिये चल पड़े।

चलते-चलते क्षिप्रा नदी के तट पर पहुँचे। वहाँ नदी के शीतल जल में स्नान करने के बाद महाकाल को प्रणाम किया। थोड़ी दूर आगे जाने पर उन्हें एक जटाजूटधारी योगी दिखाई दिये। इन योगिराज का नाम भैरवानन्द था। योगिराज इन चारों नौजवान ब्राह्मणपुत्रों को अपने आश्रम में ले गए और उनसे प्रवास का प्रयोजन पूछा। चारों ने कहा- "हम अर्थ-सिद्धि के लिये यात्री बने हैं। धनोपार्जन ही हमारा लक्ष्य है। अब या तो धन कमा कर ही लौटेंगे या मृत्यु का स्वागत करेंगे। इस धनहीन जीवन से मृत्यु अच्छी है।"

योगिराज ने उनके निश्चय की परीक्षा के लिये एक बार कहा कि धनवान बनना तो दैव के अधीन है, तब उन्होंने उत्तर दिया--"यह सच है कि भाग्य ही पुरुष को धनी बनाता है, किन्तु साहसिक पुरुष ही अवसर का लाभ उठा कर अपने भाग्य को बदल लेते हैं। पुरुष का पौरुष कभी-कभी दैव से भी अधिक बलवान हो जाता है। इसलिए आप हमें भाग्य का नाम लेकर निरुत्साहित न करें। हमने अब धनोपार्जन का प्रण पूरा करके ही लौटने का निश्चय किया है। आप अनेक सिद्धियों को जानते हैं। आप चाहें तो हमें सहायता दे सकते हैं, हमारा पथ-प्रदर्शन कर सकते हैं। योगी होने के कारण आपके पास बहुत सी शक्तियाँ हैं। हमारा निश्चय ही सच्चा है। सच्चा ही सच्चा की सहायता कर सकता है।"

भैरवानन्द को उनकी दृढ़ता देखकर प्रसन्नता हुई। प्रसन्न होकर धन कमाने का एक रास्ता बताते हुए उन्होंने कहा - "तुम हाथों में दीपक लेकर हिमालय पर्वत की ओर जाओ। वहाँ जाते-जाते जब तुम्हारे हाथ का दीपक नीचे गिर पड़े तो ठहर जाओ। जिस स्थान पर दीपक गिरे उसे खोदो। वहीं तुम्हें धन मिलेगा। धन लेकर वापिस चले आओ।"

चारों युवक हाथों में दीपक लेकर चल पड़े। कुछ दूर जाने के बाद उन में से एक के हाथ का दीपक भूमि पर गिर पड़ा। उस भूमि को खोदने पर उन्हें ताम्रमयी भूमि मिली। वह ताँबे की खान थी। उसने कहा--"यहाँ जितना चाहो, ताँबा ले लो।" अन्य युवक बोले - "मूर्ख! ताँबे से दरिद्रता दूर नहीं होगी। हम आगे बढ़ेंगे। आगे इस से अधिक मूल्य की वस्तु मिलेगी।"

उसने कहा- "तुम आगे जाओ, मैं तो यहीं रहूँगा।" यह कहकर उसने यथेष्ट ताँबा लिया और घर लौट गया।

शेष तीनों मित्र आगे बढ़े। कुछ दूर आगे जाने के बाद उन में से एक के हाथ का दीपक ज़मीन पर गिर पड़ा। उसने ज़मीन खोदी तो चाँदी की खान पाई। प्रसन्न होकर वह बोला- "यहाँ जितनी चाहो चाँदी ले लो, आगे मत जाओ।" शेष दो मित्र बोले- "पीछे ताँबे की खान मिली थी, यहाँ चाँदी की खान मिली है; निश्चय ही आगे सोने की खान मिलेगी। इसलिये हम तो आगे ही बढ़ेंगे।" यह कहकर दोनों मित्र आगे बढ़ गये।

उन दो में से एक के हाथ से फिर दीपक गिर गया। खोदने पर उसे सोने की खान मिल गई। उसने कहा- "यहाँ जितना चाहो सोना ले लो। हमारी दरिद्रता का अन्त हो जायगा। सोने से उत्तम कौन-सी चीज़ है। आओ, सोने की खान से यथेष्ट सोना खोद लें और घर ले चलें।" उसके मित्र ने उत्तर दिया- "मूर्ख! पहिले ताँबा मिला था, फिर चाँदी मिली, अब सोना मिला है; निश्चय ही आगे रत्नों की खान होगी। सोने की खान् छोड़ दो और आगे चल।" किन्तु, वह न माना। उसने कहा- "मैं तो सोना लेकर ही घर जाऊँगा, तुने आगे जाना है तो जा।"

अब वह अकेला युवक एकाकी आगे बढ़ा। रास्ता बड़ा विकट था। काँटों से उसका पैर छलनी हो गया। बर्फ़ीले रास्तों पर चलते-चलते शरीर जीर्ण-शीर्ण हो गया, किन्तु वह आगे ही आगे बढ़ता गया।

बहुत दूर जाने के बाद उसे एक मनुष्य मिला, जिसका सारा शरीर खून से लथपथ था, और जिसके मस्तक पर चक्र घूम रहा था। उसके पास जाकर अकेला युवक बोला- "तुम कौन हो? तुम्हारे

मस्तक पर चक्र क्यों घूम रहा है? यहाँ कहीं जलाशय है तो बतलाओ, मुझे प्यास लगी है।"

यह कहते ही उसके मस्तक का चक्र उतर कर ब्राह्मणयुवक के मस्तक पर लग गया। युवक के आश्चर्य की सीमा न रही। उसने कष्ट से कराहते हुए पूछा- "यह क्या हुआ? यह चक्र तुम्हारे मस्तक से हटकर मेरे मस्तक पर क्यों लग गया?"

आगन्तुक मनुष्य ने उत्तर दिया- "मेरे मस्तक पर भी यह इसी तरह अचानक लग गया था। अब यह तुम्हारे मस्तक से तभी उतरेगा जब कोई व्यक्ति धन के लोभ में घूमता हुआ यहाँ तक पहुँचेगा और तुम से बात करेगा।" युवक ने पूछा- "यह कब होगा?"

आगन्तुक- -"अब कौन राजा राज्य कर रहा है?"
युवक- "वीणा वत्सराज।"

आगन्तुक- "मुझे काल का ज्ञान नहीं। मैं राजा राम के राज्य में दरिद्र हुआ था, और सिद्धि का दीपक लेकर यहाँ तक पहुँचा था। मैंने भी एक और मनुष्य से यही प्रश्न किये थे, जो तुम ने मुझ से किये हैं।"

युवक - "किन्तु, इतने समय में तुम्हें भोजन व जल कैसे मिलता रहा?"

आगन्तुक - "यह चक्र धन के अति लोभी पुरुषों के लिये बना है। इस चक्र के मस्तक पर लगने के बाद मनुष्य को भूख, प्यास, नींद, जरा, मरण आदि नहीं सताते। केवल चक्र घूमने का कष्ट ही सताता रहता है। वह व्यक्ति अनन्त काल तक कष्ट भोगता है।"

यह कहकर वह चला गया। उधर वह मुड़ि लौटी दृष्टि से युवक
कष्ट भोगने के लिए वहीं रह गया।

नोट : लाल रंग दुनिया का है।

अनुवाद – कुलदीप उर